अनुवादक : डॉ. आफ़ताब अहमद
व्याख्याता, हिंदी-उर्दू, कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क

मुरीद पुर का पीर

पतरस बुख़ारी

अक्सर लोगों को इस बात पर आश्चर्य होता है कि मैं अपने शहर का ज़िक्र कभी नहीं करता। कुछ इस बात पर भी हैरान हैं कि मैं अब कभी अपने शहर को नहीं जाता। जब कभी लोग मुझसे इसका कारण पूछते हैं तो मैं हमेशा बात टाल देता हूँ। इससे लोगों को तरह-तरह के शक होने लगते हैं। कोई कहता है वहाँ इसपर एक मुक़दमा बन गया था, उसकी वजह से छिपा हुआ है। कोई कहता है वहाँ कहीं नौकर था, ग़बन का इल्ज़ाम लगा, पलायन करते ही बना। कोई कहता है पिता इसके भ्रष्ट आचरण के कारण घर में नहीं घुसने देते। संक्षेप में यह कि जितने मुँह उतनी बातें। आज मैं इन सब ग़लतफ़हमियों को मिटाने वाला हूँ। ख़ुदा आप पढ़ने वालों को न्याय-दृष्टि प्रदान करे।

कहानी मेरे भतीजे से शुरू होती है। मेरा भतीजा देखने में आम भतीजों से भिन्न नहीं। मेरी सारी ख़ूबियाँ उसमें मौजूद हैं और इसके अलावा नई पीढ़ी से संबद्ध होने के कारण उसमें कुछ फ़ालतू गुण नज़र आते हैं। लेकिन एक गुण तो उसमें ऐसा है कि आज तक हमारे परिवार में इस शिद्दत के साथ कभी प्रकट नहीं हुआ था। वह यह कि बड़ों का आदर करता है और मैं तो उसके निकट बस ज्ञान व विद्वता का एक देवता हूँ। यह सनक उसके दिमाग़ में क्यों समाई है? इसका कारण मैं यही बता सकता हूँ कि अत्यंत कुलीन से कुलीन परिवारों में भी कभी-कभी ऐसा देखने में आ जाता है। मैंने सुशील-से-सुशील विद्वानों की संतान को कभी-कभी बुज़ुर्गों का इतना अधिक आदर करते देखा कि उन पर नीच जाति का धोखा होने लगता है।

एक साल मैं काँग्रेस के सम्मलेन में चला गया। बल्कि यह कहना सही होगा कि काँग्रेस का सम्मलेन मेरे पास चला आया। मतलब यह कि जिस शहर में, मैं मौजूद था वहीं काँग्रेस वालों ने भी अपना सालाना सम्मलेन आयोजित करने की ठान ली। मैं पहले भी अक्सर जगह ऐलान कर चुका हूँ और अब भी मैं डंके की चोट पर यह कहने को तैयार हूँ कि इसमें मेरा ज़रा भी क़ुसूर न था। कुछ लोगों को यह शक है कि मैंने केवल अपने अहँकार की तुष्टि के लिए काँग्रेस का सम्मलेन अपने पास ही करा लिया। लेकिन यह सिर्फ़ ईर्ष्यालुओं की बदनीयती है। भांडों को मैंने अक्सर शहर में बुलवाया है। दो एक मर्तबा कुछ थिएटरों को भी आमंत्रित किया है, लेकिन काँग्रेस के मुक़ाबले में मेरा रवैया हमेशा एक गुमनाम नागरिक जैसा रहा है। बस इससे ज़्यादा मैं इस विषय पर कुछ न कहूंगा।

जब काँग्रेस का सालाना सम्मलेन बग़ल में हो रहा हो तो कौन ऐसा पुण्यात्मा होगा जो वहाँ जाने से गुरेज़ करे। ज़माना भी छुट्टियों और फ़ुर्सत का था। चुनांचे मैंने निठल्लेपन से बचने के लिए उस सम्मलेन का एक-एक भाषण सुना। दिन भर तो सम्मलेन में रहता। रात को घर आकर उस दिन के संक्षिप्त हालात अपने भतीजे को लिख भेजता ताकि प्रमाण रहे और ज़रुरत के समय काम आए।

बाद की परिस्थितियों से पता चलता है कि भतीजे साहब मेरे हर पत्र को बेहद आदर और सम्मान के साथ खोलते, बल्कि कुछ-कुछ बातों से तो प्रकट होता है कि इस उदघाटन समारोह से पहले वे बाक़ायदा वज़ू भी कर लेते। पत्र को स्वयं पढ़ते, फिर दोस्तों को सुनाते, फिर अख़बारों के एजेन्ट की दुकान पर इलाक़े के लाल बुझक्कड़ों के समूह में उसको ख़ूब बढ़ा-चढ़ाकर दोहराते, फिर क्षेत्रीय अख़बार के बेहद क्षेत्रीय एडिटर के हवाले कर देते, जो उसे बड़े औपचारिक रूप से छाप देता। उस अख़बार का नाम "मुरीद पुर गज़ट" है। उसका सम्पूर्ण फ़ाइल किसी के पास मौजूद नहीं। दो महीने तक जारी रहा। फिर कुछ वित्तीय संकट के कारण से बंद हो गया। एडिटर साहब का हुलिया निम्नलिखित है। रंग गंदुमी, गुफ़्तगू दार्शनिक, शक्ल से चोर मालूम होते हैं। किसी साहब को उनका पता मालूम हो तो मुरीदपुर की ख़िलाफ़त कमेटी को सूचित करें और ईश्वर से इसके इनाम की आशा रखें। और यह कि कोई साहब उनको हरगिज़-हरगिज़ कोई चंदा न दें वरना ख़िलाफ़त कमेटी ज़िम्मेदार न होगी।

यह भी सुनने में आया है कि उस अख़बार ने मेरे उन पत्रों के बल पर एक काँग्रेस नम्बर भी निकाल मारा, जो इतनी बड़ी संख्या में छपा कि उसके पन्ने अब तक कुछ पंसारियों की दुकानों पर नज़र आते हैं। बहरहाल मुरीदपुर के बच्चे-बच्चे ने मेरी योग्यता और लालित्य लेखन, सूझबूझ और देश प्रेम की सराहना की। मेरी अनुमति और जानकारी के बिना मुझको मुरीदपुर का राष्ट्रीय लीडर घोषित कर दिया गया। एक दो कवियों ने मुझपर कवितायें भी लिखीं जो समय-समय पर मुरीदपुर गज़ट में छपती रहीं।

मैं अपने इस सम्मान से बिल्कुल बेख़बर था। सच है ख़ुदा जिसको चाहता है इज़्ज़त देता है। मुझे मालूम न था कि मैंने अपने भतीजे को केवल कुछ पत्र लिखकर अपने देश वासियों के दिल में इस क़दर जगह बना ली है और किसी को क्या मालूम था कि यह साधारण सा इंसान जो हर रोज़ चुप-चाप सिर नीचा किए बाज़ार में से गुज़र जाता है, मुरीदपुर में पूजा जाता है। मैं वो पत्र लिखने के बाद काँग्रेस और उससे संबद्ध सारी बातों को बिल्कुल भूल चुका था। मुरीदपुर गज़ट का मैं ख़रीदार न था, भतीजे ने मेरी बुज़ुर्गी के रोब की वजह से भी उल्लेख के तौर पर इतना भी न लिख भेजा कि आप लीडर हो गए हैं। मैं जानता हूँ कि वह मुझसे यूँ कहता तो बरसों तक उसकी बात मेरी समझ में न आती। बहरहाल मुझे कुछ तो मालूम होता कि मैं तरक़्क़ी करके कहाँ से कहाँ पहुँच चुका हूँ।

कुछ अरसे बाद ख़ून की ख़राबी की वजह से मुल्क में जगह-जगह जलसे (सम्मलेन) निकल आए। जिस किसी को एक मेज़ एक कुर्सी और गुल्दान उपलब्ध हुआ उसी ने सम्मलेन का ऐलान कर दिया। सम्मेलनों के इस मौसम में एक दिन मुरीदपुर के भारतीय युवा संघ की ओर से मेरे नाम इस विषय का एक पत्र प्राप्त हुआ कि “आपके शहर के लोग आप के दर्शन की प्रतीक्षा में हैं। हर छोटा-बड़ा आप के दिव्य मुखड़े को देखने और

आपके पवित्र विचारों से लाभान्वित होने के लिए व्यग्र है। माना देश भर को आपके शुभ अस्तित्व की अत्यंत आवश्यकता है, लेकिन जन्मभूमि का अधिकार सब से अधिक है क्योंकि जन्मभूमि का काँटा भी गुलाब और जल-कुंभी से अधिक सुन्दर होता ....." इसी तरह की तीन चार अकाट्य दलीलों के बाद मुझसे यह विनती की गयी थी कि आप यहाँ आकर लोगों को हिंदू-मुस्लिम एकता का उपदेश दें।"

पत्र पढ़कर मेरे आश्चर्य की कोई सीमा न रही। लेकिन जब ठंडे दिल से इस बात पर ग़ौर किया तो धीरे-धीरे मुरीदपुर-वासियों की पारख-दृष्टि का क़ायल हो गया।

मैं एक कमज़ोर इंसान हूँ और फिर लीडरी का नशा एक पल ही में चढ़ जाता है। उस पल के अंदर मुझे अपना वतन बहुत ही प्यारा मालूम होने लगा। वतन-वासियों की संवेदनहीनता पर बड़ा तरस आया। एक आवाज़ ने कहा कि इन बेचारों के कल्याण और मार्गदर्शन का ज़िम्मेदार तू ही है। तुझे ईश्वर ने विवेक-शक्ति प्रदान की है। हज़ारों इंसान तेरी प्रतीक्षा में हैं। उठ कि सैकड़ों लोग तेरे लिए सत्तू-पानी लिए बैठे होंगे। चुनांचे मैंने मुरीदपुर का निमंत्रण स्वीकार कर लिया और लीडराना अंदाज़ में तार द्वारा सूचित किया कि पंद्रह दिन के बाद फ़लाँ ट्रेन से मुरीदपुर पहुँच जाऊँगा। स्टेशन पर कोई व्यक्ति न आए। हर एक व्यक्ति को चाहिए कि अपने-अपने काम में व्यस्त रहे। हिंदुस्तान को इस समय कर्मशीलता की आवश्यकता है।

उसके बाद सम्मलेन के दिन तक मैंने अपनी ज़िंदगी का एक-एक क्षण अपने होने वाले भाषण की तैयारी को समर्पित कर दिया। तरह-तरह के वाक्य दिमाग़ में सुबह-शाम फिरते रहते।

"हिंदू और मुस्लिम भाई-भाई हैं।"

"हिंदू-मुस्लिम दूध-शक्कर की तरह हैं।"

"हिंदुस्तान की गाड़ी के दो पहिए। ऐ मेरे दोस्तो! हिंदू और मुसलमान ही तो हैं।"

"जिन राष्ट्रों ने एकता की रस्सी को मज़बूत पकड़ा, वे इस समय सभ्यता के शिखर पर हैं। जिन्होंने दुश्मनी और फूट की दिशा में क़दम रखा, इतिहास ने उनकी ओर से अपनी आँखें बंद कर ली हैं। वग़ैरह वग़ैरह।"

बचपन के ज़माने में किसी पाठ्य पुस्तक में "सुना है कि दो बैल रहते थे एक जा" वाली कहानी पढ़ी थी, उसे निकालकर नए सिरे से फिर पढ़ा और उसकी सारी तफ़सील को नोट कर लिया। फिर याद आया कि एक और कहानी भी पढ़ी थी, जिसमें एक आदमी मरते समय अपने सभी लड़कों को बुलाकर लकड़ियों का एक गट्ठा उनके सामने रख देता है और उनसे कहता है कि इस गट्ठे को तोड़ो। वह तोड़ नहीं सकते। फिर उस गट्ठे को खोलकर एक-एक लकड़ी उन सबके हाथ में दे देता है जिसे वे आसानी से तोड़ लेते हैं। इस तरह वह एकता का सबक़ अपनी सन्तान के मन में बिठाता है। उस कहानी को भी लिख लिया। भाषण का आग़ाज़ सोचा। सो कुछ इस तरह की प्रस्तावना उचित मालूम हुई कि

"प्यारे, देश वासियो!

घटा सर पे अदबार (संकट) की छा रही है

मुसीबत समाँ अपना दिखला रही है

नहूसत पसोपेश (आगे-पीछे) मंडला रही है

यह चारों तरफ़ से निदा (आवाज़) आ रही है

कि कल कौन थे आज क्या हो गए तुम

अभी जागते थे अभी सो गए तुम

हिंदुस्तान के जिस महान कवि यानी अल्ताफ़ हुसैन 'हाली' पानीपती ने आज से कई वर्ष पूर्व ये पंक्तियाँ कलमबद्ध की थीं, उसको क्या मालूम था कि ज्यों-ज्यों समय बीतता जाएगा उसके ये दुखद शब्द दिन-प्रतिदिन और सही होते जाएँगे। आज भारत की यह हालत है ..... वग़ैरह वग़ैरह।"

उसके बाद सोचा कि भारत की हालत का एक दर्दनाक चित्र खींचूँगा। दरिद्रता, ग़रीबी, ईर्ष्या आदि की ओर संकेत करूँगा और फिर पूछूँगा कि इसका कारण आख़िर क्या है? उन सारे कारणों को दोहराऊँगा जो लोग अक्सर बयान करते हैं। मसलन विदेशी हुकूमत, जलवायु, पाश्चात्य संस्कृति। लेकिन उन सबको बारी-बारी ग़लत सिद्ध करूँगा और फिर असली कारण बताऊँगा कि असली कारण हिंदूओं और मुसलमानों की दुश्मनी है। अंत में एकता की नसीहत करूँगा और भाषण को इस शेर पर ख़त्म करूँगा किः

आ अंदलीब मिलके करें आह-व-ज़ारियाँ

तू हाय गुल पुकार मैं चिल्लाऊँ हाय दिल

दस-बारह दिन अच्छी तरह ग़ौर कर लेने के बाद मैंने इस भाषण का एक ख़ाका सा बना लिया और उसको एक काग़ज़ पर नोट कर लिया ताकि सम्मलेन में उसे अपने सामने रख सकूँ। वह ख़ाका कुछ इस तरह का थाः

1- प्रस्तावनाः हाली की पंक्तियाँ (बुलंद और दर्दनाक आवाज़ से पढ़ो)

2- भारत की मौजूदा हालत

(क). दरिद्रता

(ख़). ईर्ष्या

(ग). देश के नेताओं का स्वार्थ

3- इसका कारण

क्या विदेशी हुकूमत है? नहीं।

क्या जलवायु है? नहीं।

क्या पाश्चात्य संस्कृति है? नहीं।

तो फिर क्या है? (विराम, जिसके दौरान मुस्कुराते हुए सम्मलेन में उपस्थित जनों पर एक नज़र डालो)

4- फिर बताओ। कि कारण हिंदुओं और मुसलमानों की दुश्मनी है। (नारों के लिए विराम) उसका चित्र खींचो। दंगों आदि का ज़िक्र भर्राई हुई आवाज़ में करो।

(उसके बाद शायद फिर चंद नारे बुलंद हों। उनके लिए थोड़ा ठहर जाओ)

5- समाप्ति। सामान्य नसीहतें। विशेष रूप से एकता का उपदेश (शेर)

(उसके बाद विनम्र अंदाज़ में जाकर अपनी कुर्सी पर बैठ जाओ और लोगों की तालियों के जवाब में एक-एक क्षण के बाद उपस्थित जनों को सलाम करते रहो)

इस ख़ाके के तैयार कर चुकने के बाद सम्मलेन के दिन तक हर रोज़ इस पर एक नज़र डालता रहा और दर्पण के सामने खड़े होकर कुछ शानदार वाक्यों का अभ्यास करता रहा। नम्बर 3 के बाद की मुस्कान का ख़ास अभ्यास किया। खड़े होकर दाएँ से बाएँ और बाएँ से दाएँ घूमने की आदत डाली ताकि भाषण के दौरान आवाज़ सब तरफ़ पहुँच सके और सब आसानी से एक-एक शब्द सुन लें।

मुरीदपुर का सफ़र आठ घंटे का था। रस्ते में सांगा के स्टेशन पर गाड़ी बदलनी पड़ती थी। भारतीय युवा संघ के कुछ जोशीले सदस्य वहाँ स्वागत को आए हुए थे। उन्होंने हार पहनाए और कुछ फल वग़ैरह खाने को दिए। सांगा से मुरीदपुर तक उनके साथ अहम सियासी समस्याओं पर चर्चा करता रहा। जब गाड़ी मुरीदपुर पहुँची तो स्टेशन के बाहर कम-से-कम तीन हज़ार आदमियों का हुजूम था जो लगातार नारे लगा रहा था। मेरे साथ जो वालंटियर थे उन्होंने कहा, "सर बाहर निकालिए। लोग देखना चाहते हैं।" मैंने आज्ञा पालन किया। हार मेरे गले में थे। एक संतरा मेरे हाथ में था। मुझे देखा तो लोग और भी जोश के साथ नारा लगाने लगे। बड़ी मुश्किल से बाहर निकला। मोटर में मुझे सवार कराया गया और जुलूस सम्मलेन स्थल की तरफ़ चला।

सम्मलेन स्थल में प्रवेश किया तो हुजूम पाँच छह हज़ार तक पहुँच चुका था। जो एक आवाज़ होकर मेरा नाम ले लेकर नारे लगा रहा था। दाएँ-बाएँ, सुर्ख़-सुर्ख़ झंडों पर मुझ नाचीज़ की तारीफ़ में कुछ वाक्य भी लिखे थे। मसलन "भारत की मुक्ति तुम्हीं से है", "मुरीदपुर के सुपुत्र स्वागतम!", "हिंदुस्तान को इस समय कर्मशीलता की आवश्यकता है।"

मुझको स्टेज पर बिठाया गया। सम्मलेन के अध्यक्ष ने लोगों के सामने मुझसे दोबारा हाथ मिलाया और मेरे हाथ का चुम्बन लिया और फिर अपना परिचय-भाषण यूँ शुरू किया:

"सज्जनों! भारत के जिस विख्यात और महान लीडर को आजके सम्मलेन में भाषण देने के लिए आमंत्रित किया गया है....."

भाषण का शब्द सुनकर मैंने अपने भाषण की प्रस्तावना वाले वाक्यों को याद करने की कोशिश की। लेकिन उस समय ज़ेहन इतने नानाविध भावों का जमघट बना हुआ था कि नोट देखने की ज़रूरत पड़ी। जेब में हाथ डाला तो नोट ग़ायब। हाथ पाँव में अचानक एक हल्की सी सुरसुरी महसूस हुई। दिल को सँभाला कि ठहरो, अभी और कई जेबें हैं घबराओ नहीं। काँपते हाथों से सब जेबें देख डालीं लेकिन काग़ज़ कहीं न मिला। पूरा हॉल आँखों के सामने चक्कर खाने लगा। दिल ने ज़ोर-ज़ोर से धड़कना शुरू कर दिया। होंठ सूखते हुए महसूस हुए। दस-बारह बार जेबों को टटोला लेकिन कुछ भी हाथ न आया। जी चाहा कि ज़ोर-ज़ोर से रोना शुरू कर दूँ। बेबसी की हालत में होंठ काटने लगा। अध्यक्ष महोदय अपना भाषण बराबर दिए जा रहे थे:

"मुरीदपुर का शहर इन पर जितना भी गर्व करे कम है। हर शताब्दी और हर देश में केवल कुछ ही आदमी ऐसे पैदा होते हैं जिनका अस्तित्व मानव जाति के लिए....."

या ख़ुदा! अब मैं क्या करूँगा? एक तो भारत की हालत का चित्र खींचना है। उससे पहले यह बताना है कि हम कितने नालायक़ हैं। नालायक़ का शब्द असंगत होगा। जाहिल कहना चाहिए। यह ठीक नहीं, अशिष्ट।

".....इनकी उच्च राजनीति, इनका राष्ट्र प्रेम और निश्छल हमदर्दी से कौन वाक़िफ़ नहीं। ये सब बातें तो ख़ैर आप जानते हैं लेकिन भाषण देने में जो निपुणता इनको प्राप्त है....."

हाँ वह भाषण कहाँ से शुरू होता है? हिंदू-मुस्लिम एकता पर भाषण। चंद नसीहतें ज़रूर करनी हैं। लेकिन वो तो अंत में हैं। वह बीच में मुस्कुराना कहाँ था?

"मैं आप को विश्वास दिलाता हूँ कि आप के दिल हिला देंगे और आपको ख़ून के आँसू रुलाएँ गे—— "

अध्यक्ष महोदय की आवाज़ नारों में डूब गई। दुनिया मेरी आँखों के सामने अंधेरी हो रही थी। इतने में अध्यक्ष ने मुझसे कुछ कहा। मुझे शब्द बिल्कुल सुनाई न दिए। इतना महसूस हुआ कि भाषण का समय सिर पर आन पहुँचा है और मुझे अपनी कुर्सी पर से उठना है। अतः एक अलौकिक शक्ति के प्रभाव से उठा। कुछ लड़खड़ाया। फिर सँभल गया। मेरा हाथ काँप रहा था। हॉल में शोर था। मैं बेहोशी से ज़रा ही दूर था और नारों की गूँज उन लहरों के शोर की तरह सुनाई दे रही थी जो डूबते हुए इंसान के सिर पर से गुज़र रही हों। भाषण शुरू कहाँ से होता है? लीडरों का स्वार्थ भी ज़रूर बयान करना है, और क्या कहना है? एक कहानी भी थी, बगुले और लोमड़ी की कहानी। नहीं ठीक है दो बैल.....

इतने में हॉल में सन्नाटा छा गया। सब लोग मेरी तरफ़ देख रहे थे। मैंने अपनी आँखें बंद कर लीं, और सहारे के लिए मेज़ को पकड़ लिया। मेरा दूसरा हाथ भी काँप रहा था। वह भी मैंने मेज़ पर रख दिया। उस समय ऐसा मालूम हो रहा था जैसे मेज़ भागने को है और मैं उसे रोके खड़ा हूँ। मैंने आँखें खोलीं और मुस्कुराने की कोशिश की। गला सूखा हुआ था। बड़ी मुश्किल से मैंने यह कहा किः

"प्यारे देश वासियो!"

आवाज़ उम्मीद के ख़िलाफ़ बहुत ही बारीक और पतली सी निकली। एक दो आदमी हँस दिए। मैंने गले को साफ़ किया तो कुछ और लोग हँस पड़े। मैंने जी कड़ा करके ज़ोर से बोलना शुरू किया। फेफड़ों पर अचानक जो यूँ ज़ोर डाला तो आवाज़ बहुत ही बुलंद निकल आयी। इस पर बहुत से लोग खिलखिला कर हँस पड़े। हँसी थमी तो मैंने कहा;

"प्यारे देश वासियो!"

उसके बाद ज़रा दम लिया और फिर कहा, कि

"प्यारे देश वासियो!"

कुछ याद न आया कि उसके बाद क्या कहना है। बीसियों बातें दिमाग़ में चक्कर लगा रही थीं लेकिन ज़बान तक एक न आती थी।

"प्यारे देश वासियो!"

अब के लोगों की हँसी से मैं भन्ना गया। अपने अपमान पर बड़ा ग़ुस्सा आया। इरादा किया कि इस दफ़ा जो मुँह में आया कह दूँगा। एक बार भाषण शुरू करदूँ तो फिर कोई मुश्किल न रहेगी।

"प्यारे देश वासियो! कुछ लोग कहते हैं कि भारत की जलवायु ख़राब है, यानी ऐसी है कि हिंदुस्तान में बहुत से दोष हैं.....समझे आप? (विराम) दोष हैं। लेकिन यह बात यानी नुक्ता जिसकी तरफ़ मैंने संकेत किया है मानो तनिक भी सही नहीं।" (ठहाका)

होशो-हवास गुम हो रहे थे। समझ में न आता था कि आख़िर भाषण का सिलसिला क्या था। अचानक बैलों की कहानी याद आयी और रास्ता कुछ साफ़ होता दिखाई दिया।

"हाँ तो बात दरअसल यह है कि एक जगह दो बैल इकट्ठे रहते थे। जो बावजूद जलवायु और विदेशी हुकूमत के।" (ज़ोर का ठहाका)

यहाँ तक पहुँचकर महसूस किया कि बात कुछ बेतुकी सी हो रही है। मैंने सोचा चलो वह लकड़ी के गट्ठे की कहानी शुरू कर दें।

"मसलन आप लकड़ियों के एक गट्ठे को लीजिए, लकड़ियाँ अक्सर महँगी मिलती हैं। कारण यह है कि भारत में दरिद्रता बहुत है। क्योंकि अक्सर लोग ग़रीब हैं इसलिए मानो लकड़ियों का गट्ठा यानी आप देखिए न कि अगर..... " (बुलंद और लंबा ठहाका)

"सज्जनों! अगर आपने बुद्धि से काम न लिया तो आपका देश मिट जाएगा। नहूसत मंडला रही है।" (ठहाके और शोर- ग़ुल..... इसे बाहर निकालो। हम नहीं सुनते)

शेख़ सादी ने कहा है कि

चू अज़ क़ौमे यके बेदानिशी कर्द (जब देश में कोई एक मूर्खता करता है)

(आवाज़ आई क्या बकता है?)

"ख़ैर, इस बात को जाने दीजीए। बहरहाल इस बात में तो किसी को शक नहीं हो सकता कि

आ अंदलीब मिल के करें आहो-ज़ारियाँ
तू हाय दिल पुकार मैं चिल्लाऊँ हाय गुल

इस शेर ने रक्तचाप को तेज़ कर दिया। साथ ही लोगों का शोर भी बहुत ज़्यादा हो गया। चुनांचे मैं बड़े जोश से बोलने लगा:

"जो राष्ट्र इस समय जागरूकता के आसमान पर चढ़े हुए हैं उनके जीवन लोगों के लिए मार्गदर्शन हैं और उनकी हुकूमतें संसार की बुनियादें हिला रही हैं। (लोगों का शोर और हँसी और भी बढ़ती गई ।) आपके लीडरों के कानों पर स्वार्थ की पट्टी बंधी हुई है। दुनिया का इतिहास इस बात का गवाह है कि जीवन के वो सभी क्षेत्र ....."

लेकिन लोगों के शोर और ठहाके इतने ऊँचे हो गए कि मैं अपनी आवाज़ भी न सुन सकता था। अक्सर लोग उठ खड़े हुए थे और गला फाड़-फाड़कर कुछ कह रहे थे। मैं सिर से पाँव तक काँप रहा था। हुजूम में से किसी व्यक्ति ने बारिश की पहली बूँद की तरह हिम्मत करके सिगरेट की एक ख़ाली डिबिया मुझ पर फेंक

दी। उसके बाद चार-पाँच काग़ज़ की गोलियाँ मेरे इर्द-गिर्द स्टेज पर आ गिरीं। लेकिन मैंने अपने भाषण का सिलसिला जारी रखा।

"सज्जनो! तुम याद रखो। तुम बरबाद हो जाओगे !

“तुम दो बैल हो....."

लेकिन जब बौछार बढ़ती ही गई तो मैंने इस विवेकहीन भीड़ से खिसक लेना ही मुनासिब समझा। स्टेज से फलांगा और छलाँग भरके दरवाज़े में से बाहर का रुख़ किया। हुजूम भी मेरे पीछे लपका। मैंने मुड़कर पीछे न देखा। बल्कि सीधा भागता गया। समय-समय पर कुछ अनुचित शब्द मेरे कानों तक पहुँच रहे थे। उनको सुनकर मैंने अपनी रफ़्तार और भी तेज़ कर दी और सीधा स्टेशन का रुख़ किया। एक ट्रेन प्लेटफ़ॉर्म पर खड़ी थी। मैं बेतहाशा उसमें घुस गया। एक क्षण के बाद वह ट्रेन वहाँ से चल दी।

इस दिन के बाद आज तक न मुरीदपुर ने मुझे आमंत्रित किया है, न मुझे खुद वहाँ जाने की कभी इच्छा पैदा हुई है।

http://www.deshbandhu.co.in/admin/epaper/26052019/26052019_DB_NAT_8.pdf.pdf